SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

हिन्दी साहित्य में दलित चिंतन

शिप्रा वर्मा, पी.एच–डी., हिन्दी विभाग
डॉ. भीमराव अम्बेड़कर राजकीय महाविद्यालय, अनौंगी, कन्नौज, उत्तरप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
शिप्रा वर्मा, पी.एच–डी.
E-mail : shipragdc@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 06/03/2025
Revised on : 07/05/2025
Accepted on : 16/05/2025
Overall Similarity : 00% on 08/05/2025

शोध सार

दलित साहित्य अर्थात् मानवीय अधिकारों एवं मूल्यों से उपेक्षित समाज का साहित्य। साहित्य में दलित साहित्य का सफर संघर्षों भरा रहा है चूंकि यह साहित्य पीड़ा और संत्रास का है इसीलिए इसमें विरोध का स्वर भी अधिक है। दलित साहित्य में इतिहास के साथ–साथ उपन्यास, नाटक, निबंध, आलोचना, आत्मकथायें आदि विधायें रहीं हैं। इसके माध्यम से दलित साहित्य अपनी एक अलग पहचान बनाता है। दलित साहित्य को हिन्दी की मुख्य धारा में लानें के लिए दलित लेखकों को अभी बहुत संघर्ष करना बाकी है। हाँलाकि इस वर्ग के साहित्यकारों के क्रमबद्ध प्रयासों के द्वारा दलित साहित्य हिन्दी साहित्य में अपनी एक पकड़ बनाने का प्रयास कर रहा है।

मुख्य शब्द

दलित, उपेक्षित, सामाजिक लोकतंत्र, बहिष्कृत, तिरस्कृत, पुर्न्मूल्यांकन.

परिचय

दलित साहित्य वह है जो सदियों से शोषित, पीड़ित जन की मनोकामना को व्यक्त करता है। हिन्दी साहित्य में लेखन गैर दलित और दलित साहित्य दो वर्गो में विभक्त माना जाता है। ऐसा नहीं है कि गैर दलित लेखकों द्वारा उपेक्षित जन हेतु नहीं लिखा गया है लेकिन दलित साहित्य वही लिख सकता है जो अनुभवजन्य हो। दलित साहित्य अनुभूति का साहित्य है। यही सदियों का संत्रास साहित्य में चेतना बनकर उभरा है। समाज के अनछुये पहलू को दलित साहित्य में पूरी ईमानदारी के साथ रखा गया है। दलित साहित्य हिन्दी साहित्य की ठोस वास्तविकता है। भाषा, शिल्प आदि सभी स्तर पर दलित साहित्य सवाल खड़े करता है। चूंकि दलित साहित्य पर यह आरोप लगता रहा है कि यह साहित्य

के मापदण्ड़ों पर खरा नहीं उतरता तो यह मान लेना चाहिये कि जो साहित्य पीड़ा और संत्रास का साहित्य है वह कैसे साहित्यिक मानक स्थापित कर सकता है इसी कारण दलित साहित्य का अपना एक अलग सौन्दर्यशास्त्र है । डॉ. अम्बेडकर के 'सामाजिक लोकतंत्र' की संकल्पना से दलित साहित्य में एक चेतना की विचारधारा प्रज्वलित हुयी। वर्तमान में हिन्दी साहित्य में दलित चिंतन अनेक सम्भावनायें व्यक्त करता है। हिन्दी दलित साहित्य पर विचार करते समय नाथों, सिद्वों के साहित्य पर भी चर्चा की जानी चाहिये। सबसे प्रमुख नाम संत रैदास का आता है जिन्होने वर्ण व्यवस्था का खुलकर विरोध किया है। इसके उपरांत 1914 में सरस्वती पत्रिका में हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' दर्ज हुयी। स्वामी 'अछूतानंद हरिहर' ने भी अपनी गजल के माध्यम से हिन्दू धर्म की कुरीतियों पर व्यंग्य किया है:

''मै अछूत हूँ छूत न मुझमें, फिर भी जग क्यों ठुकराता है।
छूने में भी पाप मानता, छाया से घबराता है।।''[1]

गैर दलित लेखन

इसके पश्चात् दलित निरन्तर गति पकड़ता रहा। कुछ गैर दलित साहित्यकारों नें भी दलित साहित्य का सृजन किया। इनमें से निराला का 'चतुरी चमार' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' प्रमुख है। प्रेमचन्द का उपन्यास 'गोदान' और कहानी 'ठाकुर का कुँआ' दलित समस्या को दर्शाती है। इसके पश्चात आधुनिक काल में नागार्जुन, डॉ. शिवप्रसाद सिंह, गिरिराज किशोर, श्रीलाल शुक्ल के नाम लिये जा सकते हैं। गिरिराज किशोर के उपन्यास 'यथा प्रस्तावित' का नायक बालेसर कहता है कि ''आखिर मैने ऐसा क्या कर दिया जो मुझे साँस तक नहीं लेने दिया जाता? न मै अपनी मर्जी से जात में पैदा हुआ था और न इस जात के छोटेपन के कारण मै प्राण त्याग कर दूसरी बड़ी जात में पुनः जन्म ले सकता हूँ।''[2] इस उपन्यास को पढ़ने के बाद दलित शोषण की भयावह स्थिति का पता चलता है। नागार्जुन का उपन्यास 'बलचनामा' में एक दलित नौकर की दारूण स्थिति का चित्रण है। अमृतलाल नागर का उपन्यास 'नाच्यों बहुत गोपाल' में मेहतर जाति की विषमताओं का चित्रण है। हरिसुमन विष्ट का उपन्यास 'आसमान झुकरहा है' में कुमायुं अंचल में दलित और सवर्ण वर्ग के जातिगत भेदभाव को दर्शाया गया है।

दलित लेखन

हिन्दी साहित्य में दलित चेतना की परम्परा पुरानी रही है। लेकिन जब से साहित्य में स्वयं दलित रचनाकारों ने अपनी कलम चलायी है तब से साहित्य में दलित वर्ग का यथार्थपरक रूप सामने आया है। ये उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं जो समाज के बहिष्कृत तबके से आता है। जीवन का कडवा सच जो उन्होने अनुभव किया है वही साहित्य के माध्यम से सामने रखा। यह भी कहा जाता है कि साहित्य भारतीय परम्परा के अनुरूप नहीं है। यदि सिद्व, नाथ और जैन साहित्य हो सकते हैं तो फिर दलित साहित्य क्यों नहीं। दलित साहित्यकारों ने पुरानी परिपाटी को तोड़कर नया आगाज किया है।

दलित पत्र–पत्रिकायें

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं ने दलित लेखन के विकास में अग्रणी भूमिका निभायी। मासिक पत्रिका 'प्रज्ञा साहित्य'(1995) में ओमप्रकाश बाल्मीकि ने दलित साहित्य विशेषांक का प्रकाशन किया। यह पत्रिका इस संदर्भ मे महत्वपूर्ण है कि इसमें कुछ प्रबुद्वजनों के साक्षात्कार के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि अब दलित चेतना के स्वर को नकारा नहीं जा सकता है। डॉ. एन. सिंह के सम्पादन में प्रकाशित 'सुमन लिपि' (1955) में 'दलित साहित्य अंक' निकाला गया। इस अंक के संदर्भ में मोहनदास नैमिसराय ने कहा है '' बम्बई से प्रकाशित 'सुमन लिपि' मासिक का नवम्बर 1995 का अंक अच्छा बन पड़ा है। उनके इस प्रयास की इस अभियान में प्रशंसा तो करनी पड़ेगी कि उन्होने दलित साहित्य की पहचान हेतु 'सुमनलिपि' को चुना।''[3] जमशेदपुर से प्रकाशित 'नारी संवाद' जो डॉ. रेणु दीवान के 'दलित महिला विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ जिसमें दलित स्त्री की स्थिति को उजागर किया गया। इसके बाद 'युद्वरत आम आदमी' की सम्पादक रमणिका गुप्ता ने

दलित साहित्य को पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। गोरखपुर से प्रकाशित 'कल के लिए' का दलित विशेषांक भी दलित चिंतन के लिए एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके उपरान्त हिन्दी दलित साहित्य की महत्वपूर्ण पत्रिका कथाक्रम ने नवम्बर 2000 में दलित अंक प्रकाशित किया। डॉ. जय प्रकाश कर्दम ने अपने लेख 'कब रूकेगा विरोध का सिलसिला' में लिखा है ''आज जबकि दलित साहित्य की अपनी पहचान बन गयी है तथा एक सुविचारित दिशा में उसने काफी दूरी भी तय कर ली है, कई तरह के अवरोधों, विरोधों का सामना उसे आज भी करना पड़ रहा है।''[4] 2004 में प्रकाशित राजेन्द्र यादव का हंस पत्रिका में 'सत्ता विमर्श और दलित' विशेषांक प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इस अंक ने हिन्दी दलित साहित्य की स्थापना में अपनी विशिष्ट पहचान बनायी है।

दलित निबन्ध

दलित निबन्ध भी विचारों के स्तर पर समाज को उद्वेलित करते हैं। डॉ. पुरूषोत्तम प्रेमी का 'पत्ते क्यो गिरते हैं'1989 में प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात उनका निबन्ध संग्रह 'लोकतंत्र में भागीदारी के सवाल' दलित निबन्ध साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कुछ प्रमुख दलित निबन्ध है–डॉ. धर्मचन्द्र विद्यालंकार क्रत 'दलित और ललित निबन्ध', 'बहता पानी निर्मला', डॉ. एन. सिंह क्रत 'दलित साहित्य एक परिचय', राम बहादुर राय का 'अवधारणा और विकास' में दलित साहित्य के विकास की यात्रा और विभिन्न लेखकों पर चर्चा की गयी है। डॉ. धर्मबीर भारती के निबन्ध 'दलित साहित्य में सौन्दर्य शास्त्र' को दलित साहित्य की नवीन परिपाटी के रूप में देखा जा सकता है।

दलित आलोचना

इसी क्रम में दलित आलोचना को रखा जा सकता है। डॉ. एन. सिंह द्वारा सम्पादित 'दलित साहित्यः चिंतन के विभिन्न आयाम' हिन्दी दलित आलाचना की पहली पुस्तक मानी जाती है। मोहनदास नैमिशराय इस संदर्भ में लिखते हैं। डॉ. एन. सिंह द्वारा सम्पादित 'दलित साहित्यः चिंतन के विभिन्न आयाम' हिन्दी दलित साहित्य को समझने, परखने के लिये पहली पुस्तक मानी जायेगी जिसमें विभिन्न दृष्टिकोण से लिखे गये दलित साहित्य पर बारह महत्वपूर्ण लेखों का संग्रह है।''[5] इसके पश्चात् 'दलित विमर्श की भूमिका' कंवल भारती द्वारा प्रकाशित है। कंवल भारती ने इस पुस्तक में भारत में चले समाज सुधार आंदोलनों का पुनर्मूल्यांकन किया है। 'दलित साहित्य दशा और दिशा' माता प्रसाद द्वारा लिखी गयी आलोचनात्मक पुस्तक है। इसमें उन्होने टिप्पणी की है कि क्या गैर दलित भी साहित्य लिख सकता है। वे अपना मत व्यक्त करते हुये कहते हैं कि ''सदियों से जो प्रताड़ित, तिरस्कृत, शोषित और बहिष्कृत रहे हैं, यह साहित्य उनका है और इस साहित्य का मूल स्वर प्रतिरोधी और प्रतिवादी है।''[6]

दलित नाटक एवं उपन्यास

यदि दलित नाटक की बात की जाये तो दलित लेखकों ने अधिक नाटक नहीं लिखे हैं लेकिन अब कुछ स्तर तक दलित नाटकों का मंचन होने लगा है। श्री शिवप्रसन्न दास का 'हरिजन' नाटक 1959 में प्रकाशित हुआ था। श्री आर. एन. सागर ने भी 'मार्ग का कांटा' तथा 'अंतिम अवरोध' दो नाटकों की रचना की। मोहनदास नैमिशराय का 'अदालतनामा' एक उल्लेखनीय नाटक है। वस्तुतः नाटकों के माध्यम से समाज को जाग्रत करने का कार्य किया गया है।

दलित साहित्य में उपन्यास दलित चेतना को सशक्त रूप में उजागर करते है। डॉ. धर्मवीर भारती का 'पहला खत', बलवन्त सिंह का 'भूखी चिंगारी की लाल मुस्कुराहट', जय प्रकाश कर्दम का 'छप्पर'। हालांकि उपन्यास विधा दलित साहित्य में अधिक चर्चा का विषय नहीं बन पायी। आवश्यकता इस बात की है कि दलित उपन्यास और अधिक लिखे जाये। डॉ. जय प्रकाश कर्दम लिखते हैं ''हिन्दी साहित्य में उपन्यास बहुत कम लिखे गये हैं जबकि साहित्य की यह एक जरूरी और लोकप्रिय विधा है।''[7]

दलित आत्मकथायें

दलित साहित्य मे सबसे अधिक श्रेय आत्मकथाकारों को दिया जाना चाहिये। ये आत्मकथायें सामाजिक विसंगतिओं को उजागर करती हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी आत्मकथा 'अमी कसा झालो' के द्वारा दलित लेखकों

को आत्मकथा लिखने हेतु प्रेरित किया। दया पंवार की 'अछूत', शरण कुमार लिम्बाने की 'अक्करमाशी' बेबी कामले की 'हमारा जीवन', लक्ष्मण गायकवाड़ की 'उचक्का' मोहनदास नैमिशराय की 'अपने–अपने पिजड़े', ओमप्रकाश बाल्मीकि की 'जूठन' जैसे कालजयी आत्मकथाओं ने समाज को उस सच से सामना कराया जो अभिशाप के रूप में समाज का एक वर्ग झेलने को मजबूर था। मोहनदास नैमिशराय अपने आत्मकथा में लिखते हैं ''वस्तुतः यह मेरे अकेले की आत्मकथा नहीं है बल्कि उस दुर्घटनाग्रस्त समाज के भोगे हुये कड़वे अनुभवों की बेबाक कहानी है।''[8] हिन्दी दलित साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार ओमप्रकाश बाल्मीकि का 'जूठन' एक सशक्त अभिव्यक्ति है। इसमें भंगी समाज के लड़के का चित्रण है जो प्रत्येक स्तर पर अपमानित और तिरस्कृत होता है। बाबजूद इसके वह समाज में अपनी जगह स्थापित करता है। ओमप्रकाश जी ने भोगे हुये यथार्थ का चित्रण जूठन में किया है। उन्होने यह सिद्व करने का प्रयास किया है ''बदलाव पलायन से नहीं संघर्ष और संवाद से आयेगा।''[9] इसी संदर्भ में माताप्रसाद जी का आत्मकथ्य 'झोपड़ी से राजभवन' का जिक्र भी आता है। इसमें दलितों के राजभवन तक पहुँचने की संघर्ष गाथा है। राज्यपाल बनने से पहले की उनकी जीवन यात्रा किन परिस्थितियों में बीती इसका उद्घाटन यह आत्मकथ्य है।

दलित कहानी

कहानी विधा में दलित साहित्य समृद्व है। हिन्दी की पहली दलित कहानी मुक्ति पत्रिका में प्रकाशित हुयी जो सतीश द्वारा रचित 'वचनवद्व' है। गैर दलित लेखकों में प्रेमचन्द एक ऐसे कथाकार के रूप में सामने आतें हैं जिसने नारकीय दलित जीवन को अपनी कहानियों का विषय बनाया। जबसे दलित लेखकों का साहित्य में पदार्पण हुआ नये मूल्यों का चित्रण साहित्य में होने लगा। अनुभूतिपरक साहित्य दलितो का यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत करता है। डॉ. गिरिराज अग्रवाल नें 'दलित जीवन की कहानियाँ' सम्पादित की जिसमें केवल एक दलित कथाकार 'श्री रघुनाथ प्यासा' को शामिल किया गया। अन्य सभी गैर दलित साहित्यकार थे। रमणिका गुप्ता ने ' दूसरी दुनिया का यथार्थ' का सम्पादन करके महत्वपूर्ण कार्य किया जिसमें अठ्ठारह दलित कथाकारों की कहानियों का संकलन किया गया। डॉ. कुसुम वियोगी ने तीन कथा अंकों का सम्पादन किया जो दलित साहित्य की उपलब्धि है। 'दलित महिला कथाकारों की चर्चित कहानियाँ' का सम्पादन दलित कथा की दृष्टि से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। ओमप्रकाश बाल्मीकि का कहानी संग्रह 'सलाम' त्रासद स्थितियों को चित्रित करता है। जयप्रकाश कर्दम एक प्रतिष्ठित दलित रचनाकार है। उन्होने दलित साहित्य के लिये रचनात्मक संघर्ष किया । कहानी 'मोहरे' का नायक सत्यप्रकाश अपने समाज को जोड़ने की कोशिश करता दिखायी देता है–''यदि आप लोग चाहते हैं, हमारा समाज तरक्की करें, हमारे समाज के बच्चे पढ़–लिखकर आगे बढ़े तो लोगों को नौकरी की भावना से ऊपर उठकर इन बच्चों को पढ़ाने के लिए अतिरिक्त उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना होगा।''[10] कहानी की दृष्टि से भी दलित साहित्य उत्तरोत्तर वृद्वि कर रहा है।

निष्कर्ष

दलित साहित्य जैसे–जैसे आगे बढ़ता जा रहा है वैसे–वैसे चिन्तन की परम्परा विकसित होती जा रही है। विभिन्न समाज मे परिस्थितियों के अनुसार साहित्य रचा जाता है। हमारे समाज मे जाति का मुद्दा सबसे बड़ी चुनौती बनकर सामने आता है। समाज की मुख्यधारा के साथ–साथ साहित्य की मुख्यधारा में भी शामिल होने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहना होगा। हमारी दृष्टि जितनी पारदर्शी होगी लेखन उतना ही सार्थक तथा प्रभावी होगा। विभिन्न विधाओं के माध्यम से दलित साहित्य उत्तरोत्तर विकसित होता जा रहा है। अतः कहा जा सकता है कि दलित साहित्य का विकास हिन्दी साहित्य की विभिन्न विद्याओं में निरन्तर किसी न किसी रूप में समाहित किया जा रहा हे।

संदर्भ सूची

1. प्रसाद, माता (1993) *हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा,* वाराणसी वि.वि. प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 339।
2. किशोर, गिरिराज (1913) *यथा प्रस्तावित,* सस्ता साहित्य मण्ड़ल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 46।

3. नैमिसराय, मोहनदास (1996) *दलित अस्मिता के आस–पास की पत्रकारिता,* 12 फरवरी राष्ट्रीय सहारा दैनिक, पृ. 12।
4. सागर, शैलेन्द्र (2010) मेरी आर्थिक मौत, *कथाक्रम* त्रैमासिक पत्रिका, अंक–जनवरी–मार्च, लखनऊ, पृ. 161।
5. नैमिशराय, मोहनदास (1997) हिन्दी साहित्य में दलित चेतना, *समकालीन भारतीय साहित्य,* द्विमासिक पत्रिका, अंक– मार्च–अप्रैल, फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली, पृ. 164।
6. प्रसाद, माता (सम्पादक) (2018) *दलित साहित्यः दशा और दिशा,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 4।
7. कर्दम, जय प्रकाश (1994) *छप्पर उपन्यास,* सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 12।
8. नैमिसराय, मोहनदास (1995) *अपने–अपने पिंजड़े,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. बाल्मीकि, ओमप्रकाश (1997) *जूठन,* राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 152।
10. कर्दम, जयप्रकाश (2005) *तलाश,* विक्रम प्रकाशन दिल्ली, पृ. 78।

****